आचार्य श्रीजिनकवीन्द्रसागरसूरि

[ले० — साध्वीजी श्री सज्जनश्रीजी 'विशारद']

इस अनादिकालीन चतुर्गत्यात्मक संसार कानन में अनन्त प्राणी स्व स्व कर्मानुसार विचित्र-विचित्र शरीरधारण करके कर्म विपाक को शुभाशुभ रूप से भोगते हुए भ्रमण करते रहते हैं। उनमें से कोई आत्मा किसी महान् पुण्योदय से मानव शरीर पाकर सद्गुरु संयोग से स्वरूप का भान करके प्रकृति की ओर गमन करते हैं। जन्म और जरामरण से छूट कर वास्तविक मुक्ति प्राप्त करने के लिये तप संयम की साधना पूर्वक स्व पर कल्याण साधते हैं। ऐसे ही प्राणियों में से स्वर्गीय आचार्यदेव थे, जिन्होंने बाल्यावस्था से आत्मविकास के पथ पर चल पर मानव जीवन को कृतार्थ किया।

वंश-परिचय व जन्म

आपश्री के पूर्वज सोनीगरा चौहान क्षत्रिय थे और वीर प्रसविनी मरुभूमि के धन्नाणी ग्राम में निवास करते थे। वि० सं० ६०५ में श्री देवानन्दसूरि से प्रतिबोध पाकर जैन ओसवाल बने और अहिंसा धर्म धारण किया। पूर्व पुरुष जगाजी शाह 'रानी' आकर रहने लगे। रानी से पाहण और फिर व्यापारार्थ इन्हीं के वंशज श्रीमलजी सं० १६१६ में लालपुरा चले गये थे। वहाँ भी स्थिति ठीक न होने से इनके वंशज शेषमलजी पालनपुर आये और वहीं निवास कर लिया। इसी वंश में बेचरभाई के सुपुत्र श्री निहालचन्द्र शाह को धर्मपत्नी श्रीमती बजू बाई की रत्नकुक्षि से वि० सं० १९६४ को चैत्र शुक्ला १३ को शुभ लग्न सूचित एक दिव्य बालक ने अवतार लिया। पिता-माता के इनके पूर्व कई बालक बाल्या-वस्था में ही काल-कवलित हो चुके थे। अतः उन्होंने विचार किया कि हमारा यह बालक जीवित रहा तो इसे शासन सेवार्थ समर्पित कर देंगे। 'होनहार बिरवान के होत चीकने पात' के अनुसार यह बालक शैशवावस्था से ही तेजस्वी और तीव्र बुद्धि का था।

जब हमारे यह दिव्य पुरुष केवल १० वर्ष के ही थे तभी पिता की छत्र-छाया उठ गई और यह प्रसंग इस बालक के लिये वैराग्योद्भव का कारण बना।

शोक-ग्रस्त माता पुत्र अपनी अनाथ दशा से अत्यन्त दुःखी हो गये। 'दुख' में भगवान याद आता है यह कहावत सही है। कुछ दिन तो शोकाभिभूत हो व्यतीत किये। बालक धनपत ने कहा, माँ मैं दीक्षा लूंगा। मुझे किसी अच्छे गुरुजी को सौंप दें।

माता ने विचार किया, अब एक बार बड़ी बहिन के दर्शन करने चलना चाहिये। माताजी की बड़ी बहिन, जिनका नाम जीवीबाई था, स्वनामधन्या प्रसिद्ध विदुषी आर्यारत्न श्रीमती पुण्यश्रीजी म० सा० के पास दीक्षा लेकर साध्वी बन गई थी। उनका नाम श्रीमती दयाश्री जी म० था। वे इस समय श्रीमती रत्नश्रीजी म० सा० के साथ मारवाड़ में विचरती थी, वहीं माता पुत्र दर्शनार्थ जा पहुँचे।

श्रीमती रत्नश्रीजी म० सा० ने इस बुद्धिमान तेजस्वी बालक की भावना को वैराग्यमय आख्यानों से परिपुष्ट किया और गणाधीश्वर श्रीमान् हरिसागरजी म० सा० के पास धार्मिक शिक्षा-दीक्षा लेने को कोटे भेज दिया। वहीं रह कर शिक्षा प्राप्त करने लगे। थोड़े दिनों में ही

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इन्होंने जीवविचार, नवतत्त्व आदि प्रकरण एवं प्रतिक्रमण, स्तवन, सज्झाय आदि सीख लिये।

गणाधीश महोदय कोटा से जयपुर पधारे। वहीं वि० सं० १९७६ के फाल्गुन मास की कृष्ण पंचमी को १२ वर्ष के किशोर बालक धनपतशाह ने शुभ मुहूर्त में बड़ी धूमधाम से ४ अन्य वैरागियों के साथ दीक्षा धारण की। इनका नाम 'कवीन्द्रसागर' रखा गया और गणाधीश महोदय के शिष्य बने।

अध्ययन

अपने योग्य गुरुदेव की छत्रछाया में निवास करके व्याकरण, न्याय, काव्य, कोश, छन्द, अलंकार आदि शास्त्र पढ़े एवं संस्कृत प्राकृत गुर्जर आदि भाषाओं का सम्यग् ज्ञान प्राप्त किया व जैन शास्त्रों का भी गम्भीर अध्ययन किया। 'यथानाम तथागुणः' के अनुरूप आप सोलह वर्ष की आयु से ही काव्य प्रणयन करने लग गये थे। स्वल्प काल में ही आशु कवि बन गये। आपने संस्कृत और राष्ट्रभाषा में काव्य साहित्य में अनुपम वृद्धि की है। दार्शनिक एवं तत्वज्ञान से पूर्ण अनेक चैत्यवन्दन, स्तवन, स्तुतियाँ सज्झाएँ और पुजाएँ बनाई है जो जैन साहित्य की अनुपम कृतियां हैं। जैन साहित्य के गम्भीर ज्ञान का सरल एवं सरस विवेचन पढ़ कर पाठक अनायास ही तत्वज्ञान को हृदयंगम कर सकता है और आनन्द-समुद्र में मग्न हो सकता है। आधुनिक काल में इस प्रकार तत्वज्ञानमय साहित्य बहुत कम दृष्टिगोचर होता है। जैन समाज को आपसे अत्यधिक आशाएं थीं, कि असामयिक निधन से वे सब निराशा में परिवर्तित हो गई।

आपने ४१ वर्ष के संयमी जीवन में ३० वर्ष गुरुदेव के चरणों में व्यतीत किये और मारवाड़, कच्छ, गुजरात, उत्तर प्रदेश, बंगाल में विहार करके तीर्थ यात्रा के साथ ही धर्म प्रचार किया। जयपुर, जैसलमेर आदि कई ज्ञान भंडारों को सुव्यवस्थित करने, सूचिपत्र बनाने आदि में गुरुवर्य महोदय की सहायता की।

आप ही के अदम्य साहस और प्रेरणा से वि० सं० २००६ में मेड़ता रोड फलोधी पार्श्वनाथ विद्यालय की स्थापना हुई। उसी वर्ष गुरुदेव ने मेडता रोड में उपधान मालारोहण के अवसर पर मार्गशीर्ष शुक्ला १० के दिन आपको उपाध्याय पद से विभूषित किया। आपके गुरुदेव का पक्षाघात से उसी वर्ष पोष कृष्णा अष्टमी को स्वर्गवास हो जाने पर उपस्थित श्रीसंघ ने आप श्री को आचार्यपद पर विराजमान होने की प्रार्थना की, किन्तु आपश्री ने फरमाया हमारे समुदाय में परम्परा से बड़े ही इस पद को अलंकृत करते हैं। अतः यह पद वीरपुत्र श्रीमान आनन्दसागरजी महाराज सा० सुशोभित करेंगे। मुझे जो गुरुदेव बना गये हैं, वही रहूँगा। कितनी विनम्रता और निःस्पृहता!

योग-साधना

आपको आत्मसाधना के लिये एकान्त स्थान अत्यधिक रुचिकर थे। विद्याध्ययनान्तर आपश्री योगसाधना के लिये कुछ समय ओसियां के निकट पर्वत गुफा में रहे थे, एवं लोहावट के पास की टेकरी भी आपका साधना स्थल रहा था।

जयपुर में मोहनवाड़ी नामक स्थान पर भी आपने कई बार तपस्या पूर्वक साधना की थी। वहाँ आपके सामने नागदेव फन उठाये रात्रि भर बैठे रहे थे। यह दृश्य कई व्यक्तियों ने आँखों देखा था। आप हठयोग को आसन प्राणायाम मुद्रानेति, धौती आदि कई क्रियायें किया करते थे।

तपश्चर्या

प्रायः देखा जाता है कि ज्ञानाभ्यासी साधु साध्वी वर्ग तपस्या से वंचित रह जाते हैं किन्तु आप महानुभाव इसके अपवाद रूप थे। ज्ञानार्जन, एवं काव्य-प्रणयन के के साथ ही तपश्चर्या भी समय समय पर किया करते थे। ४२ वर्ष के संयमी जीवन में आपने मास-क्षपण, पक्ष-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

क्षमण, अठ्ठाइयाँ, पंचौले, आदि किये। तेलों को तो गिनती ही नहीं की जा सकती।

साहित्य सेवा

आपने सैकड़ों छोटे मोटे चैत्यवन्दन, स्तुतियाँ स्तवन, सज्झाय आदि बनाये, रत्नत्रय पूजा, पार्श्वनाथ पंचकल्याणक पूजा, महावीर पंचकल्याणक पूजा, चौसठप्रकारी पूजा, तथा चारों दादा गुरुओं की पृथक २ पूजाएँ एवं चैत्री-पूर्णिमा कार्तिक-पूर्णिमा विधि, उपधान, विंशतिस्थानक, वर्षीतप छम्मासी तप आदि के देव-वन्दन आदि विशिष्ट रचनाएँ की हैं। आप संस्कृत प्राकृत हिन्दी में समान रूप में रचनाएँ करते थे। बहुत सी रचनाओं में आपने अपना नाम न देकर अपने पूज्य गुरुदेव का, गुरुभ्राताओं का एवं अन्यों का नाम दिया है। इस सारे साहित्य का पूर्ण परिचय विस्तार भय से यहाँ नहीं दिया जा रहा है।

आपकी प्रवचन शैली ओजस्वी व दार्शनिक ज्ञानयुक्त थी। भाषा सरल, सुबोध और प्रसाद गुणयुक्त थी। रचनाओं में अलंकार स्वभावतः ही आ गये हैं। अतः आपको एक प्रतिभाशाली कवि भी कहा जा सकता है।

आचार्य पद

विक्रम सं० २०१७ की पौष शुक्ला १० को प्रखरवक्ता व्याख्यान-वाचस्पति वीरपुत्र श्री जिन आनन्दसागर सूरीश्वर जी म० सा० के आकस्मिक स्वर्ग गमनानन्तर सारी समुदाय ने आपही को समुदायाधीश बनाया। अहमदाबाद में चैत्र कृष्ण ७ को श्री खरतरगच्छ संघ द्वारा आपको महोत्सव पूर्वक आचार्य पद पर प्रतिष्ठित किया गया।

आपश्री स्वभाव से ही सरल मिलनसार और गम्भीर थे। दयालुता और हृदय की विशालता आदि सद्गुणों से सुशोभित थे। आपश्री के अन्तःकरण में शासन, व गच्छ व समुदाय के उत्कर्ष की भावनाएँ सतत् जागृत रहती थी। पालीताना में "श्री जिन हरि विहार" आपश्री की सत्प्रेरणा का कीर्तिस्तम्भ है।

आपश्री के कई शिष्य हुए, पर वर्त्तमान में केवल श्री कल्याणसागरजी तथा मुनिश्री कैलाशसागर जी विद्यमान है।

समुदाय के दुर्भाग्य से आपश्री पूरे एक वर्ष भी आचार्य पद द्वारा सेवा नहीं कर पाये कि करालकाल ने निर्दयता पूर्वक इस रत्न को समुदाय से छीन लिया। उग्र विहार करते हुए स्वस्थ्य सबल देहधारी ये महानपुरुष अहमदाबाद से केवल २० दिन में मन्दसौर के पास बूढ़ा ग्राम में फा० शु० एकम को संध्या समय पधारे। वहाँ प्रतिष्ठा कार्य व योगोद्वहन कराने पधारे थे किन्तु फा० शु० ५ शनिवार २०१८ को रात्रि को १२॥ बजे अक्समात हार्टफेल हो जाने से नवकार का जाप करते एवं प्रतिष्ठा कार्य के लिगे ध्यान में अवस्थित ये महानुभाव संघ व समुदाय को निराधार निराश्रित बनाकर देवलोक में जा विराजे दादा गुरुदेव व शासनदेव उस महापुरुष की आत्मा को शांति एवं समुदाय को उनके पदानुसरण की शक्ति प्रदान करें, यही हमारी हार्दिक अभिलाषा है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org